Journal Homepage: www.ijarpr.com ISSN: 3049-0103 (Online)

International Journal of Advance Research Publication and Reviews

Vol 2, Issue 3, pp 28-32, March 2025

समकालीन हिन्दी उपन्यासों का इतिवृत्तात्मक परिदृश्य

डॉ. शैलेषकुमार भरतसिंह झाला

पीएचडी, अध्यापक सहायक, तुलनात्मक साहित्यविभाग, वीर नर्मद दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत , गुजरात, भारत

यहाँ हमें समकालीन आधुनिकता पर विचार करने से पहले कुछ बातों को साफ करना आवश्यक जान पड़ता है। आधुनिकता क्या है? या उपन्यास में यह कैसे और किस तरह है? एक सवाल यह भी खड़ा हो जाता है कि आधुनिकता साहित्य के बाहर भी हो सकती है?

वस्तुतः यह जीवन-बोध है। जिसमें प्रश्न, प्रश्न चिन्हों की निरन्तरता है। मध्यकालीन और रोमांटिक बोध का अस्वीकार है। इसके साथ जुड़ा हुआ दूसरा सवाल यह है कि क्या यह मूल्य है? या प्रक्रिया ? इतना साफ हो चुका है कि यह एक प्रक्रिया है और 'इस प्रक्रिया में स्वीकृत मूल्य अस्वीकृत हो जाने की गवाही देकर, फिर स्थापित होकर विस्थापित होते रहे हैं। इसलिए इसे मूल्यमयता या मूल्यहीनता में आँकना भी असंगत जान पड़ रहा है। एक और सवाल आधुनिकता के बारे में उठाया गया है कि क्या पाश्चात्य बनाम भारतीय आधुनिकता में किसी मौलिक अन्तर को आँकना सही है? यह ठीक है कि पाश्चात्य आधुनिकता के आधार पर भारतीय आधुनिकता की पहचान शायद आरोपित होने की गवाही दे सकती है। काम की आधुनिकता के आधार पर या काफ्का की आधुनिकता की दृष्टि से हिन्दी उपन्यास में आधुनिकता की पहचान और परख करना संगत नहीं जान पड़ता। यदि आधुनिकता एक प्रक्रिया हो तो इसके एक से अधिक दौर हो सकते हैं। जिनसे होकर गुजर रही है।

उपन्यास में आधुनिकता का आरम्भ कब से है यह जानने के लिए हिन्दी उपन्यास पर सरसरी नजर डाला जाय तो लगता है कि आधुनिकता बोध की शुरुआत गोदान (1934-1936) से मानी जा सकती है "हिन्दी उपन्यास एक नंगी दृष्टि में इसका संकेत किया गया है। "1 इस उपन्यास में लेखक ने अपनी परम्परा को तोड़ा है। इसके अन्त को खुला छोड़ दिया है। इसका अन्त उपन्यास के बाहर हो जाता है। इसके अन्त में होरी के धराशायी होने की स्थिति, दातादीन को सामने खड़ा होने की स्थिति में और धनिया के पछाड़ खाकर गिरने की स्थिति में छोड़कर इसके अन्त को खुला छोड़ दिया गया। जो आधुनिकता की चुनौती का परिणाम है उपन्यास आधुनिकता की दृष्टि से नया मोड़ लेता है। जिस तरह 'पूस की रात' व 'कफन' कहानी और निराला की 'कुकुरमुत्ता' कविता में नया मोड़ है जिसमें आधुनिकता का बोध है उसी प्रकार आधुनिकता की शुरुआत 'गोदान' से मानी जा सकती है। लेकिन लेखक ने यहाँ से स्वयं चन्द अनुभूति की परम्परा को तोड़ा। इसकी गवाही अज्ञेय के 'शेखर एक जीवनी' में भी मिल जाती है। इसका समय (1960) के बाद माना जा सकता है। जिसमें आधुनिकता बोध गहराने लगता है यहाँ कुछ महत्वपूर्ण समकालीन उपन्यासों का आधुनिकता के परिदृश्य के संदर्भ में अध्ययन करेंगे।

अज्ञेय का 'अपने-अपने अजनवी' (1961), मोहन राकेश 'अंधेरे बन्द कमरे' (1961) और 'न जाने वाला कल' (1968), नरेश मेहता 'यह पथ बन्धु' (1962), निर्मल वर्मा का 'वे दिन' (1964), श्री लाल शुक्ल 'राग दरबारी' (1961), राजकमल का शहर था शहर नहीं था (1966), निर्मल वर्मा की 'लाल टीन की छत' (1973), रमेश वक्षिय का वैसाखियों खाली ईमारत (1966), महेन्द्र भल्ला का एक पति का नोट्स (1966) और दूसरी तरफ उषा प्रियवंदा का 'रुकोगी नहीं राधिका' (1967), श्रीकान्त का 'दूसरी बार' (1968), गिरिधर गोपाल का 'कंदिल और कुहासे' (1969), गोविन्द मिश्र का 'वह अपना चेहरा' (1970), प्रमोद सिन्हा का 'उसका शहर' (1970), गिरिराज किशोर का 'यात्राएँ' (1971), ममता कालिया का 'बेघर' (1971), मणि मधुकर का 'सफेद मेमने' (1971), जगदम्बा प्रसाद का 'दिक्षित का कटा हुआ आसमान' (1971) और छठा तंत्र (1977), कृष्णा सोबती का 'सूरजमूखी अंधेरे के' (1972), कृष्ण बलदेव वैध का 'विमल जाये तो जाये कहाँ' (1974) आदि उपन्यासों में आधुनिकताबोध की झलक दिखाई पड़ती है। इसमें से कुछ महत्वपूर्ण उपन्यासों पर विस्तार से चर्चा करना आवश्यक है।

अधिकांश उपन्यासों में आधुनिकता का बोध नगरबोध से जुड़ा हुआ है। नगरीकरण की प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है। इसकी प्रक्रिया भारतीय परिवेश में या जीवन के इतने गहरे में अभी नहीं घसी है। जितनी अमेरिका या यूरोप के परिवेश या जीवन में। इसलिए इन्सान के परिवेश से कट जाने की समस्या, विजातीयता की समस्या जितने गहरे स्तर पर इन देशों के परिवेश या जीवन में है। उतनी भारत के

नगर जीवन में नहीं। इसलिए आधुनिकता संवेदन के धरातल पर इतनी नहीं है जितनी धारणा के धरातल पर है। इस तरह आधुनिकता के बोध ने रोमांटिक बोध का विरोध किया है। आज वास्तव और जीवन-वास्तव इतना जटिल हो रहा है कि वह पकड़ में नहीं आ रहा है। उपन्यास इसे पकड़ने की कोशिश में खुद बदलने की गवाही दे रहा है।

अज्ञेय के 'अपने-अपने अजनवी' (1961) उपन्यास को कुछ आलोचक अस्तित्ववादी उपन्यास कहते हैं। लेकिन यह अस्तित्ववादी उपन्यास न होकर अस्तित्ववादी भाषा (स्वतन्त्रता, चरण, विसंगति, मृत्युबोध आदि) का उपन्यास है। या यूँ कहें उसमें अस्तित्ववादी मुहावरों का प्रयोग हुआ है। इस उपन्यास में आधुनिकता का बोध मृत्यु के साक्षात्कार के संदर्भ में होता है। उपन्यास के सभी पात्र एक दूसरे के निकट होते हुए भी अजनवी की भाँति रहते है। उपन्यास में न तो मृत्यु की समस्या है न स्वतन्त्रता की, समस्या वेगानगी की है, क्योंकि हार, लाचारी, विवशता, क्षण भंगुरता, स्वतंत्रता, ईश्वर, मृत्यु आदि का बोध वेगानगी में होता है ताकि इन सबका मिला-जुला नाम वेगानापन है। यह उपन्यास अज्ञेय की रचना प्रक्रिया की आधुनिक की उस दौर में सूचित करता है।

यह उपन्यास तीन खण्ड़ में विभाजित है। प्रथम खण्ड़ में योके और सेल्मा, द्वितीय खण्ड़ में सेल्मा और यान और तृतीय खण्ड़ में योके और जगन्नाथन हैं, जो मुख्य रुप से कथा को आगे बढ़ाते हैं। प्रारम्भ के दो खण्ड़ों में आधुनिकता की झलक मिलती है, पर तृतीय खण्ड़ तक आते-आते आधुनिकता समाप्त सी दिखने लगती है। इसमें नगर बोध को ढूँढ़ने का प्रयास किया है। अज्ञेय जी ने अपने पात्रों के माध्यम से नये जीवन मूल्यों का प्रयास किया है। इस प्रकार आधुनिकता चुनौती के सम्बन्ध में उजागर हुई है। नरेश मेहता के उपन्यास 'यह पथ बन्धु था' (1962) में आधुनिकता की संवेदना से जुड़ी है। यह उपन्यास उषा प्रियम्बदा की कहानी 'वापसी' जैसा है। इस उपन्यास में आधुनिकता का बोध थोड़ा भिन्न है। इस उपन्यास में अकेलेपन अजनवीपन और घर-बेघर होने के बोध में आधुनिकता उजागर होती है क्योंकि नायक एक लम्बी अवधि के पश्चात तो बेगाना निःसहाय और अकेला पाता है। इसलिए कि वह आगे के बाद देखता है कि उसके परिवार के स्वरुप विदीर्ण हो गया है। माँ-बाप चल बसे हैं पत्नी जीवन की आखिरी घड़ियाँ गीन रही है। दो लड़कियों की शादी हो चुकी है। सबके चले जाने पर नायक मौत की भयावह स्थिति का बोध अपने अकेलेपन और अजनवीपन में करता है। आधुनिकता अस्तित्ववाद के निकट आकर उभरी है। क्योंकि नायक अपने परिवेश से जुड़कर आत्म-निर्वासन के बोध से पीड़ित है। इसमें वैयक्तिक और सामान्य जीवन का चित्रण संवेदना और आत्मीयता के धरातल पर चित्रित किया गया है। इस उपन्यास में आधुनिकता कुछ भिन्न स्तर पर उभरी है फिर भी नगर बोध से जुड़ गयी है उपन्यास में आधुनिकता एक मूल्य न होकर एक प्रक्रिया के रुप में उभरी है जिसे उनके परिवेश और उपन्यास विशेष में आँकना संगत जान पड़ता है। आधुनिकता इस दौर से गुजरने की गवाही दे चुकी है और आज अगर यह विद्रोहशील होने लगी है तो यह इस प्रक्रिया का अगला दौड़ है। इस उपन्यास में अधिकांश आधुनिकता की संवेदना है और अधिकांश में इसलिए कि कहीं-कहीं छायावादी बोध की झलकियाँ भी देखने को मिलती है अन्त में लाजमी होना, जो लाजमी का अन्त नहीं है। इस तरह की रुढ़ि थी जो आधुनिकता के इस दौर को सूचित करती है और जिसे अब तोड़ा जा रहा है। आधुनिकता का बोध नगरीकरण की प्रक्रिया से भी जुड़ा हुआ है। जिसे राजेन्द्र यादव के उपन्यास 'उजड़े हुए लोग' (1956) में आँका जा सकता है। यह साठ के पहले की कृति है। यह उपन्यास इस रुढ़ि का शिकार नहीं है और इसकी गवाही इसके अन्तबोध से मिल जाती है इस उपन्यास के नगर के लोग इतने कटे हुए नहीं हैं जितने उखड़े हुए हैं। उखड़कर कहीं और लगने की कोशिश में है।

निर्मल वर्मा का उपन्यास 'वे दिन' (1964) में आधुनिकता बोध कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त हुआ है।'वे दिन' से ही आधुनिकतावादी उपन्यासों में एक नया मोड़ आता है। क्योंकि लेखक इस उपन्यास के माध्यम से उपन्यास के पुराने चौखटे को तोड़ता है और नये भावों-विचारों का व्यापक फैसला करता है इसमें कविता का स्वर, चित्रकला और संगीतकला की नयी शैली देखने को मिलती है। इसमें कथानक और परिवेश का अभाव है उपन्यास भारतीय परिवेश में उसी तरह लिखा गया है जिस तरह विकलिंग ने भारतीय परिवेश को लेकर उपन्यास का निर्माण किया है। उपन्यास में सभी पात्र अकेलेपन का बोध करते हैं। क्योंकि उपन्यास का पात्र रायना उसका पति, उसके बच्चे, फांज, मारिया, मैं और टीटी सभी अकेलेपन के बोध से पीड़ित हैं सभी पात्र 'स्व' जीवन में व्यर्थता का अनुभव करते हैं सभी के जीवन में एक तरह की उदासीनता, तटस्थता, व्यर्थता और खालीपन व्याप्त है। जो एक दूसरे के सुख-दुःख और सम्बन्ध से परिचित होना व्यर्थ समझते हैं। रायना टी टी, फांज, मारिया का अकेलापन नियति से बंधा है। मनुष्य कहाँ से आया है। कहाँ जा रहा है। सब कुछ अज्ञात है। मानव नियति के प्रश्न के कारण इसमें अस्तित्ववादी आधुनिकता उभरी है-"रायना, टी टी, फान्ज, मारिया सबके जीवन में एक खास तरह का रीस्तापन है, उदासी है, उदासीनता है, भावहीनता तथा तटस्थता है। इन्हें एक दूसरे को जानना अधिक लगता है। अधिक जानना दुःख की बात बनता है।"2

उपन्यासकार ने उपन्यास के माध्यम से शहरी गन्दगी का जटिलता और वास्तविकता को पकड़ने का प्रयास किया है। नगर-बोध से छुटकारा पाने के लिए कथानायक पहाड़ पर जाने की बात सोचता है उपन्यास में "हर व्यक्ति दूसरे के लिए अंधेरा है।"3

इस तरह इसमें आधुनिकता नगरीकरण की प्रक्रिया से उत्पन्न अजातीयता के बोध में स्पष्ट हुई है, न तो उपन्यास के किसी भी पात्र का एक दूसरे के सम्बन्धों का बोध है, न तो किसी को किसी की आवश्यकता है। इस उपन्यास को आधुनिकता को अनेकरुपों में और अनेक स्थानों पर देखते हैं। निर्मल वर्मा के दूसरे उपन्यास 'लालटीन की छत' (1974) उपन्यास के पुराने ढ़ांचे को तोड़ा गया है, जिसे तोड़ने का अपना अंदाज है। इस उपन्यास में कुछ नहीं होता है और सब कुछ होता रहता है। जिसे तोड़ने का अपना अन्दाज है यह उस अकेली लड़की काया की कथा है। जो एक पहाड़ी शहर में रहती है शिमला में। इसके मकानों की छतों पर लाल रंग रोगन पोता गया है और यह लेखक का जाना-पहचाना शहर है। काया के लिए सर्दी की सुनी और लम्बी छुट्टियाँ हैं और भटकन है। माँ पास होकर भी दूर

है। बाप दिल्ली में है। बचपन टूट गया है भावी संकेत-भराहै। अजब सा आतंक लिए हुए उपन्यास पकड़ता-छोड़ता चलता है, और इस चलने में आधुनिकता की प्रक्रिया जारी रहती है। यह आधुनिकता उस पहलू की है जो वास्तव को भीतर से पकड़ती है इस उपन्यास में बुद्धि जेसुआ को मौत का डर है। इस तरह डर अकेलापन सूनापन, बेगानापन, धुन्ध की तरह उपन्यास पर छाये रहते हैं। लालटीन की छत वाले शहर (शिमला) में धुन्ध है। उपन्यास के भीतर धुन्ध ही धुन्ध है। यह शहर एक भरा हुआ शहर है। यहाँ कालके बोध का लोग हो गया है जो आधुनिकता के बोध को उजागर करता है। इसी तरह आशा और मृत्यु का बोध भी आधुनिकता के बोध को गहराता है। दरअसल जब भी बोध बदलता है। शिल्प की नयी शुरुआत लाजमी हो जाती है यह बात हिन्दी के अन्य उपन्यास के विकास में परिलक्षित की जा सकती है।

बद्दी उज्जमा का उपन्यास 'एक चूहे की मौत' (1971) एक नये अंदाज और मिजाज का उपन्यास है, जिसकी रचना हिन्दी में शायद पहली बार देखने को मिली है। यह कामू के 'प्लेग' नामक उपन्यास के समान्तर है। क्योंकि इसमें भीचूहे के माध्यम से भावों विचारों की अभिव्यक्ति की गयी और 'प्लेग' में भी। इन उपन्यासों में व्यवस्थातंत्र की भयावहता को अंकित किया गया है। बुद्धिजीवी इस तरह असहाय है कि न चाहते हुए भी व्यवस्था से चिपके हुए है। इसमें आधुनिक मनुष्य की नामहीनता, अजनवीयता, असहायता, अकेलेपन का दारुण अनुभव विसंगति तथा संत्रास की स्थिति देखने को मिलती है। उपन्यास में दफ्तरी माहौल की घुटनभरी है। अतः इसमें संवेदना के और धारणा के स्तर पर आधुनिकता अधिक उभर कर आयी है। इस उपन्यास में यह दिखाया गया है कि आज का इन्सान मात्र चूहे मारने में समर्थ है जिसके सामने चूहे मारने के सिवा अन्य कोई विकल्प है ही नहीं जिसको वह ढूँढ़ सके व्यवस्था का तंत्र ऐसा बन गया है कि जिसमें अरुप चूहों (फाइलों) का जन्म होता है और उपन्यास का वह छोटा चूहा भी चूहे मारने की नियति को भोगता है। क्योंकि उसके सामने दो ही विकल्प रहता है। चूहे मारो या भूखा मरो। वद्दी उज्जमा इस उपन्यास के माध्यम से सरकारी व्यवस्था पर चोट नहीं करते बल्कि विश्वतंत्र पर भी चोट करते हैं। इसलिए 'ग' अपने पत्र में लिखता है- "चूहा सिर्फ वह नहीं है जहाँ तुम काम करते हो या जहाँ मैं काम करता हूँ। सारी दुनिया ही एक चूहा खाना है। जहाँ चूहे बनकर ही जिन्दगी वसर की जा सकती है। चूहे नहीं मारता उसके लिए इस दुनिया में कोई जगह नहीं है।"4 इस तरह चूहे खाने की दानवीय शक्तियाँ मनुष्य को 'हीन' की स्थिति में 'ही 'न होने' के बोध की स्थिति में ले जाती है। उपन्यास व्यवस्था की क्रुरता और भयावहता के संदर्भ में अमानवीय होती जा रही है मानव स्थिति का यथार्थबोध करता है। आधुनिकता के वैचारिक धरातल पर जटिल और बहुमूल्य मानसिकता की अभिव्यक्ति करता है। इसी तरह कापका के उपन्यास 'अभियोग' के नायक केवल मि. 'के' बनकर रह जाता है। इसमें आधुनिकता का बोध उजागर होने लगता है। डॉ. हरदयाल ने एक चूहेमार को नायक कहा है और दूसरे को उपनायक।"5

इस उपन्यास में अस्तित्ववादी दृष्टि भी उजागर होती है। जिसके मूल में आधुनिकता की प्रक्रिया है। यह बोध नगरीकरण के प्रक्रिया से भी जुड़ा हुआ है।एक सफल चूहेमार को चित्रकार बना देता है। यह अन्त उपन्यास के बाहर होकर आधुनिकता की प्रक्रिया को उजागर करता है। इस तरह आधुनिकता को बोध उपन्यास की रंगों में समाया हुआ है। इस उपन्यास में पात्रों का नामांकन 'क' 'ख' 'ग' के नामों से परिचित कराया गया है अतः इससे आज के संदर्भ में इन्सान की नामहीनता का ही परिचय नहीं होता बल्कि व्यक्ति की तटस्थ जिन्दगी के अर्थ का द्योतक भी होता है। पश्चिम में अनेक उपन्यासकारों ने पात्रों के नाम रखने की जगह 'क' 'ख' 'ग' जैसी शैली अपनाकर यह प्रतिपादित करने का भी प्रयत्न किया था कि एक नये आधुनिक होते समाज में व्यक्ति को खोता जा रहा है और एक अनाप व्यवस्था का वह टाइप बनता जा रहा है। यह प्रवृत्ति आधुनिक लेखन में भी इस दौर में भी देखी जा सकती है।

ममता कालिया का 'बेघर' भी आधुनिक जीवन बोध की जटिलता को उकेरने वाला उपन्यास है इसमें सम्भोग, संदेह में बदलकर पति-पत्नी के सम्बन्ध को तोड़ डालता है। यहाँ का संदर्भ उपन्यास संदर्भों का न होकर सम्बन्धों और स्थितियों का हो जा रहा है इसमें यह नहीं कि आधुनिकता की प्रक्रिया संदर्भों को उजागर नहीं करती सम्बन्धों और स्थितियों को ही उजागर करती है। इस उपन्यास की आधार शिला आधुनिकता और संस्कार बद्धता के बीच तनाव को लेकर रखी गयी है। 'बेघर' उपन्यास का परमजीत संवेदनशील और आधुनिक होते हुए भी कौमार्य सम्बन्धी नैतिकता को अन्धविश्वास की हद तक पाले हुए है। वह न कौमार्य का विज्ञान जानता है, न उस सम्बन्ध में की गयी आधुनिक खोज से परिचित है। दरअसल स्त्री शरीर या रति विज्ञान के मामलों में वह निरक्षर हैं उसकी यह निरक्षरता उसे जड़ीभूत संतरस्त, अपाहित और निष्क्रिय बना देती है। उसके जीवन की घटनाओं के कार्य कारण का सिलसिला नहीं है। मौत तक अचानक होती है उसके मरने के बाद हितैशियों या सम्बन्धियों की जो प्रतिक्रियायें है, वह मरने के बाद ऐसा लगता है कि वह मरा नहीं बहुत सारी जिम्मेदारियाँ छोड़कर पिकनिक मनाने चला गया है। 'बेघर' मानवीय करुण विसंगतियाँ और अंधजड़ताओं को इस तरह प्रस्तुत करता है जैसे सारे तत्व विदूषी की तत्व के स्तर है। इस उपन्यास की आधार शिला आधुनिकता और संस्कारबद्धता के बीच तनाव को लेकर रखी गयी है इस उपन्यास की लेखिका ममता कालिया ने वैश्विकीकरण को सामान्य व्यंग्य विनोद या उपहास से ऊपर उठकर रचनात्मक तत्व के रुप में विकसित किया है। गम्भीर और दुःखद प्रसंगों को ममता हास्य के एक झटके से और सुखद बना देती है। इस उपन्यास के कई हिस्से हैं जो सोमुअल वकेट नाटकों की तरह अभिभूत करते हैं जड़बत बनाते हैं। आधुनिकता की ऋणात्मकता की प्रक्रिया को व्यक्त करते हैं और अन्ततः हास्य के गहरे जीवन व्याप्ति तनाव में अतिक्रमित हो जाते हैं। इसमें आधुनिकता की प्रक्रिया जारी है।

राजकमल चौधरी 'मछली मरी हुई' वास्तव में एक नैतिकतावादी उपन्यास है इस उपन्यास का ऊपरी ढ़ांचा अश्लील प्रसंगों से भरा हुआ है। लेसवियन (समलिंगी) सम्बन्धों वाली स्त्रियों की समस्या इस उपन्यास में प्रमुख लगती है। कल्याणी शीरी और संध्या तीनों एक तरह की रति-विषयक लत की शिकार हैं। वे बिमारी की सीमा तक ठंडी है और निर्मल पद्मावत जैसे पुरुष के सम्पर्क में आकर अपने

पूर्णस्त्रीत्व तक जुड़ नहीं पाती है। स्त्री-स्त्री के बीच चलने वाली अनैतिकता उनका चरित्र बन चुकी है। नतीजा है कि जारी नोच-व-कोट और हिंसक काम क्रियाओं के बावजूद निर्मल पद्मावत कल्याणी और शीरी को स्त्री की तरह ग्रहण नहीं कर पाता है। शीरी और संध्या की परस्पर रतिक्रीड़ा में लीन देखकर उसे उस रहस्य का पता चल जाता है जिसके कारण बलात्कार करने के कारण उसे अपने पुरुषत्व की प्रतीत होती है। यह सब उपन्यास का ऊपरी तंत्र है। उपन्यास में भीतर-भीतर एक नैतिक तंत्र भी चलता रहता है। स्त्री सम्बन्धी सारी नैतिकता को सुरक्षित रखता है। वह काला रोजगार करने वाले नम्बर दो का पैसा कमाने वाले मजदूरों का शोषण करने वाले पूँजीपतियों से समझौता नहीं करता। दैहिक चरित्र की दृष्टि से अपवित्र होते हुए भी वह अपने आर्थिक चरित्र की रक्षा करता है। इसी दृष्टि से निर्मल पद्मावत एक नैतिक आदमी है। इस उपन्यास की आधुनिकता नैतिकता के नये प्रतिमान अन्वेशण में नीहित है। इसी प्रकार 'शहर था शहर नहीं था' (1966) उपन्यास को तान्त्रिक बोध के आधुनिक संस्करण से जोड़ा गया है तो कभी अस्तित्ववादी बोध से लैस किया गया है।

महेन्द्र भल्ला 'एक पति के नोट्स' (1966) में नोट्स लिखने का उद्देश्य अनुभव के छोटे-छोटे टुकड़े को यथावत अंकित करना है और इन टुकड़ों को एक क्रम में रखकर इन्हे पानी देना है। क्या इसमें पानी देने की कोशिश है इन टुकड़ों से गुजर कर आँका जा सकता है। इस उपन्यास का पहला उद्देश्य इसके पुराने चौखटे को तोड़ना है जिसमें अनुभूति की धारा को बन्द किया जाता रहा है। इस उपन्यास में बेमानीपन का तीखा बोध उजागर होता है और इसे तोड़ने की कोशिश भी होती है। 'मैं' की कोशिश इससे छुटकारा पाने की है जो आरोपित नहीं जान पड़ती यह बोरियत केवल सेक्स की नहीं रोज के दायरे में चक्कर काटते जीवन की भी है। इस उपन्यास के बारे में जब यह कहा जाता है कि इसका मूल स्वर सम्भोग का है तो यह अधूरा जान पड़ता है। "समकालीन उपन्यास को अंधेरे बन्द कमरे से सम्भोग रुम तक रुप में आँका जा सकता है।"6 यह सही है कि समकालीन उपन्यास में सम्भोग की बात बार-बार कही गयी है।

मोहन राकेश के उपन्यास 'अंधेरे बन्द कमरे' (1961) में आधुनिकता को अधूरा स्वीकार किया गया है। अनुभूति की धारा पहले खुलकर फिर बन्द हो जाती है। इस उपन्यास में पति-पत्नी का हरवंश नितिया का एक दूसरे से कट जाने में नगर बोध का परिवेश है। इसमें अनुभूति की धारा खुलने का आभास देती है लेकिन इसके एक दूसरे के लौटने के साथ यह बन्द हो जाती है। इसमें अनुभूति की धारा बन्द कर आधुनिकता को अस्वीकारा गया। इस समापन या अन्त के बोध में आधुनिकता की प्रक्रिया जारी होकर ठप हो जाती है। 'अंधेरे बन्द कमरे' में भटकते हुए एक दूसरे से अपहचान बनाये रखने के लिए विवश है। उपन्यास में मधुसूदन कहता है- "मैं नौ साल के बाद दिल्ली आया तो मुझे महसूस हुआ जैसे मेरे लिए यह एक बिल्कुल नया और अपरिचित शहर हो। जिन लोगों के यहाँ कभी मेरा रोज उठना-बैठना था उनमें से कई एक तो अब बिल्कुल ही नहीं पहचाने जाते थे। उनके नयन, नक्श भी वही थे मगर चेहरे के आस-पास की हवा बिल्कुल और हो गयी थी।"7

'न आने वाला कल' (1968) मोहन राकेश का एक और महत्वपूर्ण उपन्यास है इसमें उन तमाम लोगों की अभाव ग्रस्त जिन्दगी की रेखा खींची गयी है जो कादरवर्तन स्कूल के दमघोटू वातावरण मे जी रहे हैं। यह पहाड़ी स्थान में स्थापित एक मिशन स्कूल है जो सत्तर साल पुराना है। पुराना इस अर्थ में भी परिस्थितियों के बदल जाने पर भी वहाँ की घिसीपीटी जिन्दगी का क्रम ज्यों का त्यों है। फादर वर्टन स्कूल की दमघोटू व्यवस्था से सभी बुद्धिजीवी उबर पाने की छटपटाहट में है। इस उपन्यास की बानी "आधुनिकता की सजीव पात्र है बानी आधुनिकता सभ्यता और संस्कृति को जीवन में स्वीकारती है। वह बदली हुई सामाजिक परिस्थितियों से समझौता नहीं करती उसके जीने के अपने मान-दण्ड है। इसमें अनुभूति की धारा बन्द नहीं होती है। इसमें 'मैं' की अकुलाहट और छटपटाहट को इस ढंग से कहा गया है कि वह उपन्यास के अन्त को इसके बाहर ले जाती है अनुभूति की धारा को आधुनिकता की प्रक्रिया बन्द होने नहीं देती है।'बानी' के लिए शारीरिक नैतिकता का कुछ भी महत्व नहीं है। वह सत्रह वर्ष की अवस्था में ही कई-कई पुरुषों के सम्पर्क में आ चुकी थी। वह खुले 'सेक्स' के विचार की थी। वह स्पष्ट कहती है कि कई लोगों के साथ मेरा शारीरिक सम्बन्ध रहा ही है, हॉलाकि हर एक के साथ एक सा नहीं।"8 वह 'सेक्स' को 'टेस्ट' के स्तर पर स्वीकार करती है। वह किसी से भावनात्मक स्तर पर नहीं जुड़ती है। भावना के स्तर पर किसी पुरुष से जुड़ना मानों उसे ठेस पहुँचाता है। बानी साफ-साफ कहती है-"किसी आदमी के साथ घर बसाकर रहने की बात से मुझे शुरु से चिढ़ रही है।"9 बानी के लिए भावना एक कमजोरी है लेकिन सुषमा श्रीवास्तव के लिए भावना जीवन के लिए स्वाभाविक स्थिति है। आधुनिकता बानी 'मैं' है पर भटकाव के स्तर पर है वह कहती है "मेरा मन क्यों इतना भटकता है, उसका वास्तविक कारण मेरा अकेलापन है। "10वह अन्य लोगों को इसलिए जान पाती है कि वह स्वयं को अच्छी तरह पहचान की स्थिति में है। शोभा में भी आधुनिकता का सशक्त रुप मिलता है लेकिन उसमें आधुनिकता का गहरा बोध कम झलकता है। शोभा आधुनिक है पति की मृत्यु के बाद अपने पिता के इजाजत के बगैर वह मनोज से शादी करती है लेकिन मनोज से जुड़कर अपने पूर्व की स्थितियों से उबर नहीं पाती। वह अपने अन्दर कुछ नया नहीं कर पाती है, वह अपने अन्दर ही अन्दर कुछ तय करती रहती है। "वह बात है अपनी मर्जी से तय की थी वैसे ही यह प्रीतम की है, न उस बार इजाजत ली थी न इस बार लेना चाहती हूँ।"11 वह चुनाव के लिए किसी को विवशता में नहीं जीती वह मनोज से जुड़कर उससे अलग भी अपनी मर्जी से जीती है अन्ततः यह उपन्यास उपन्यास से बाहर होकर आधुनिकता की प्रक्रिया का बोध कराता है।

संदर्भ ग्रंथ:-

1. इन्द्रनाथ मदान हिन्दी उपन्यास एक नई दृष्टि
2. निर्मल वर्मा- 'वे दिन'- पृष्ठ संख्या 136
3. निर्मल वर्मा- 'वे दिन'- पृष्ठ संख्या- 85
4. वद्दी उज्जमा चूहे की मौत पृष्ठ संख्या- 73
5. वद्दी उज्जमा चूहे की मौत पृष्ठ संख्या- 73
6. वद्दी उज्जमा चूहे की मौत पृष्ठ संख्या- 73
7. मोहन राकेश 'न आने वाला कल' पृष्ठ संख्या - 181
8. मोहन राकेश 'न आने वाला कल' पृष्ठ संख्या- 181
9. मोहन राकेश 'न आने वाला कल' पृष्ठ संख्या - 158
10. मोहन राकेश 'न आने वाला कल' पृष्ठ संख्या 162
11. मोहन राकेश 'न आने वाला कल' पृष्ठ संख्या 206